SATYA GRANTH-MALA Vol. I.

॥ ओ३म् ॥

MUNDKOPNISHAD

TRANSLATED

IN

HINDI

BY

Raghu Nath Swami,

NARELA STATION, Delhi Province.

October, 1916. 1st Editi on. Copies 1000

Prlnted at the "Imperial Native Press," by B. R. Dayal.

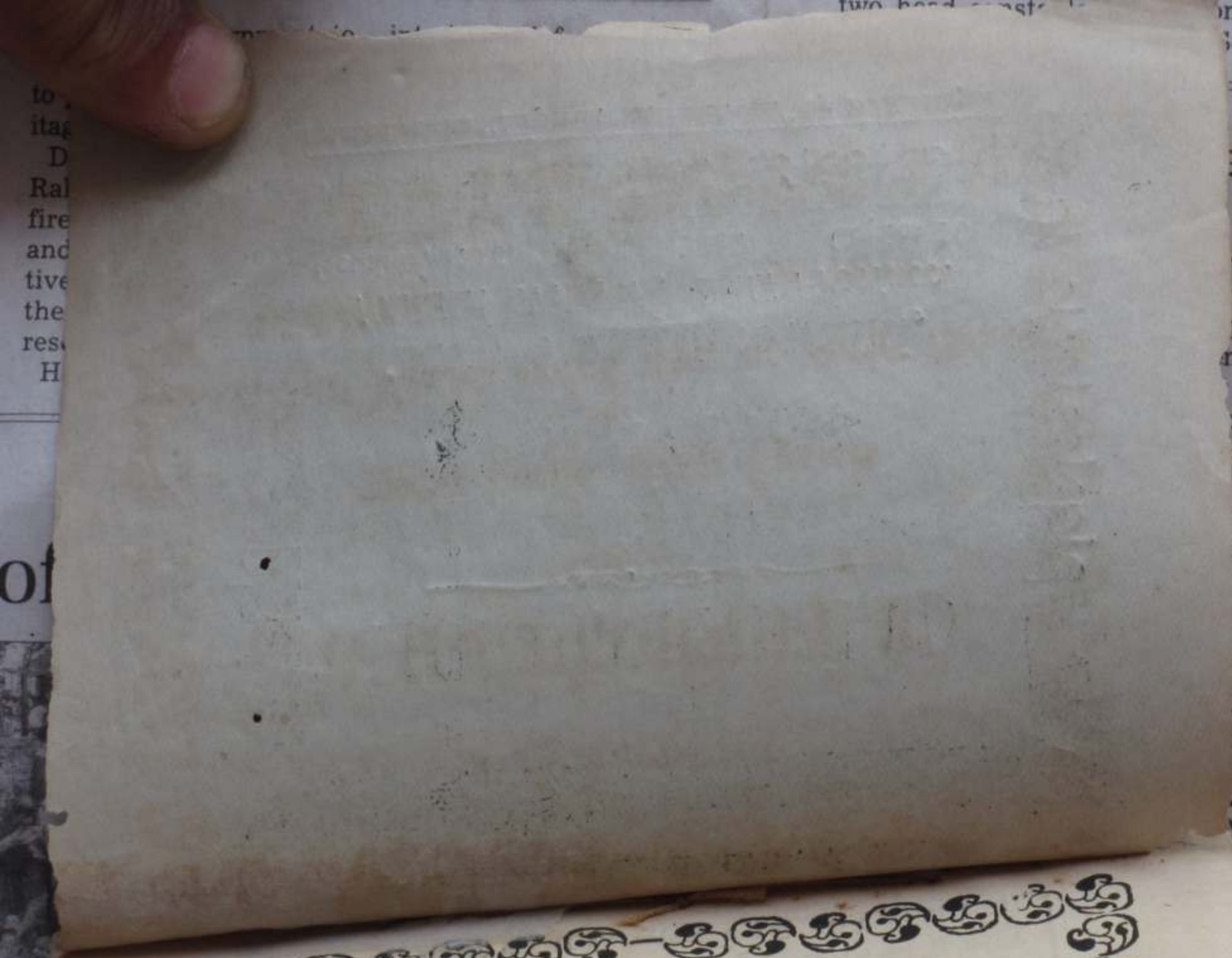

श्रीगणेशायनमः ॥

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

॥ मुण्डकोपनिषद् ॥

सम्पादक

रघुनाथ स्वामी नरेला निवासी

ने

इम्पीरियल नेटिव प्रेस देहली में छपवा कर प्रकाशित किया

सम्वत् १९७३ सन् १९१६ ई

॥ ओ३म् ॥

॥ नि वे द न ॥

सज्जन पाठको मैं एक छोटे से ग्राम "गढ़ी बोलनी" तहसील रेवाड़ी का रहने वालाहूं, यादव आभीर जाति गोत्र आफरिया मे मेरा जन्म हुआ है, अपने पिता पितामहों की कृपा से जो बहुत सत्संगी पुरुष थे कुछ थोड़ीसी विद्या पाकर इलाक़ा अंग्रेजी और रियासत भरतपुर में क़ानूगो, सदरक़ानूगो नायब तहसीलदार, तहसीलदार, शिरिस्तेदारी आदि स्थानों पर काम कर चुकाहूं, और अपनी आय का अधिक'भाग अपने और अपने भाइयों की सन्तान के विद्योपार्जन केलिये व्यय करचुकाहूं, और अब शास्त्रों के नियमानुसार ४७ वर्ष की अवस्था मे नौकरी से पिन्शन लेकर श्री पूजनीय गुरुदेवजी की आज्ञा व परम कृपा से गृहस्थाश्रम को पूर्णकर वाणप्रस्थाश्रम को धारण करता हूं, आशा है कि आप सज्जन भी

शास्त्रानुसार इस का अनुकरण करेंगे और इसी अवसर पर यह

शास्त्रानुसार इस का अनुकरण करेंगे और इसी अवसर पर यह परमोत्तम उपनिषद् भाष्य भाषा स्वामीजी की कृपा से प्रकाशित कराकर सज्जनोंके अर्पण करताहूं जिन सज्जनों को आवश्यक्ता हो वह दो पैसे का टिकट भेजकर अमूल्य मंगालेवें ॥

पुस्तक मंगाने का पता—

श्री राव रूपराम यादव

आनन्दाश्रम, रामपुरा

रेवाड़ी–ज़ि० गुड़गावां ॥

॥ प्रस्तावना ॥

दोहा ओङ्कार मङ्गल सदा प्रणमों बारंबार ।
परमानन्द स्वरूपं निज ज्ञानं दातार ॥१॥
निरंजनं दुख भंजनं ररंकार ओङ्कार ।
सत्य पुरुष सोऽहं तुही अलखं सर्वाधार ॥२॥
अच्युत अगम अपार तुम तद्वन ब्रह्म अनन्त ।
परम हंस अज ईश शिव सब के आद्योरु अन्त ॥३॥
निगम नेति नेति कहैं ऋषि न पावें पार ।
ज्योतिस्वरूप अखण्ड है सर्व तत्व का सार ॥४॥

"सत्यमेव जयते नानृतम्" ॥ "सत्यान्नास्ति परो धर्मः ॥"

भारत वर्ष के सनातन धर्म का मूल श्री वेदभगवान् जिसे भारत वासी श्रुति माता भी कहते हैं वेदका यथार्थ अर्थ ज्ञान अर्थात् सत्य विद्या है वेद "विदज्ञाने" धातु से बना हुआ है, जो ज्ञान वा विद्या मनुष्य को

ज्ञानेन्द्रिय द्वारा प्राप्त होती है जैसाकि देखने से,वा सुनने से सूंघने से वा चखने से वा स्पर्श से जो कुछ विदित होताहै उसका नाम "अपरा" विद्या है और केवल आत्मा के अनुभव से जो आन्तरिक निश्चयात्मक यथार्थ ज्ञान और भक्तिद्वारा भी प्राप्त नहीं होता, जो दृढ़ गुरु भक्ति से प्राप्त होता है उस को गुरुगम अनुभव निश्चयात्मक यथार्थ ज्ञान होता है उसका नाम 'परा' विद्या है इसी को वेदकी उपनिषद् विद्या ब्रह्म विद्या वा आत्मविद्या भी कहते हैं, क्योंकि वेद इसी विद्या से प्रकट हुआ है अतएव सम्पूर्णज्ञान और विद्याका मूल है, यह विद्या किसी विशेष मनुष्य की बनाई हुई नहीं, अनन्तकाल से सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा का स्वरूप ही यह विद्या है और यह ज्ञान जिनके शुद्ध अन्तःकरण मे सूर्य के प्रतिबिम्ब की न्याई प्रकट होता है उन्हीं को ऋषि देवर्षि और महात्मा आदि नामों से पुकारा जाता है जिस को पहिले ही पहिल इसका आभ्यन्तरिक अनुभव होता है उस पहिले ज्ञान को

श्रुति कहते हैं इसी लिये इस का नाम ईश्वर की वाणी अर्थात् परमात्मा का पहुंचाया हुआ ज्ञान कहाता है, जब वह पुरुष अपने आत्मा के अनुभव का विषय वाणी और युक्ति द्वारा किसी ऐसे पुरुष को पहुंचाता है कि जिस को अभीस्वतः उस विषय का आन्तरिक अनुभव नहीं हुआ है, तो उस पहिले पुरुष का अनुभव ज्ञान जब दूसरे पुरुषको सुनने के अनन्तर अनुभव द्वारा सिद्ध हो जाता है उसका नाम 'स्मृति' है, सम्पूर्ण सनातनधर्म इन ही दोनों प्रकार के ज्ञान और अनुभव से बना हुआ है और इन दोनों प्रकार के ज्ञान और विद्या के विस्तार का नाम शास्त्र, है शास्त्र का मुख्य उद्देश्य यह है कि जीव को अज्ञान अर्थात् नाना प्रकार की भ्रान्तियों से उद्धार कर यथार्थ ज्ञान की अवस्था मे प्राप्त कर दे, इन्द्रियों से यथार्थ ज्ञान नहीं होता क्योंकि आत्माका अतीन्द्रिय ज्ञान है और जिस विद्या मे यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति का उपाय है

उसका नाम "ब्रह्म विद्या" है जैसा कि 'औपनिषदं पुरुषं पृच्छामि' उपनिषद् से जानने योग्य परिपूर्ण पुरुषका स्वरूप पूछता हूं, इस से सिद्ध हुआ कि इसी ब्रह्म विद्या से कि जिस को उपनिषद् कहते हैं परमात्मा का यथार्थ ज्ञान होसक्ता है, परन्तु जो इस विद्या के प्रकरणों से और गूढ़ाशयों से अपरिचित और गुरु भक्ति से शून्य होता है वह अर्थ का अनर्थ कर बैठता है जैसा कि प्रबोधचन्द्र नाटक में उप निषद् आप कहतीं हैं:–

कुछ अर्थ मेरो औरही बहु करें और प्रकार।
जीविका के हेत मुरख तोड़ फोड़ उचार ॥१॥
अर्थ को सु अनर्थ भाषें देहिं बहु सन्ताप ॥
बहु भांति मैं दुख पाइयो नहिं डरते शठ् पाप ॥२॥
केचित् कहैं जग सत्य है मुख करो यह प्रकाश।
केचित् कहैं मत द्वैत में उपनिषद् कर तूं बास ॥३॥

इक कहैं जीव परेश को है भेद एहु बखान।
इक कहैं भेदा भेदको उपनिषद् तूं उर मान ॥४॥
इह भांति व्याकुल मैं करी नहिं लखें मूरख बात॥
ज्यों दुष्ट कौरव सभा मे मह द्रोपदी विष्यात ॥५॥

'उप' समीपता अर्थात् जीव ब्रह्म की एकता 'नि' निश्चय करके 'सद्' प्राप्त हो 'यया' जिस से 'सा उपनिषद्' वह उपनिषद् है इसकी संस्कृत व्युत्पत्ति इस प्रकार है "उप समीपस्थं ब्रह्मात्मैकत्वं स हेतु संसारं सादयतीति उपनिषद्" अविद्या साहित संसार की निवृत्ति करने वाला जो जीव ब्रह्म का एकत्व रूप ज्ञान है उस का नाम उपनिषद् है भेद वादी इस को यों कथन करते हैं, उप, ब्रह्मकी समीपता 'नि' निश्चय करके सैद् प्राप्त हो "यथा उप ब्रह्म सामीप्यं नि निश्चयेन सीदति प्राप्नोति यया सा उपनिषद्" जिस से ब्रह्म की समीपता लाभ हो ॥

ओ३म् तत् सत्—रघुनाथ स्वामी—देहली ॥

ॐ भद्रंकर्णेभिरिति शान्तिः ॥३॥

ॐ ब्रह्मा देवानां प्रथमः संबभूव विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता । स ब्रह्म विद्यांसर्व विद्याप्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठपुत्राय प्राह ॥ १ ॥

ब्रह्म वेत्ताओं मे प्रथम सब का उत्पादक संसार का रक्षक ब्रह्मा उत्पन्न हुआ, उसने अथर्वा नामक अपने ज्येष्ठ पुत्र को सर्व विद्याओं में श्रेष्ठ ब्रह्म विद्याका उपदेश किया ॥

अथर्वणे यां प्रवदेत ब्रह्माथर्वातां पुरोवाचाङ्गिरे ब्रह्म विद्याम् ॥ स भारद्वाजाय सत्यवाहाय प्राह भारद्वाजोऽङ्गिरसे परावराम् ॥२॥

पूर्व अथर्वा को जिस विद्या का ब्रह्माने उपदेश किया अथर्वा ने अंगिर ऋषि के प्रति उस ब्रह्म विद्याको कहा, उस ने भारद्वाज गोत्र

वाले सत्यवाह को और सत्यवाह ने अंगिरा को पर और अपर विद्याका उपदेश किया ॥ १०

शौनको ह वै महाशालोंऽगिरसं विधिवदुपसन्नःपप्रच्छ ॥
कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति॥३॥

यह प्रसिद्ध है कि महा गृहस्थी शौनक ने विधि पूर्वक अंगिरा नामक ऋषि के सन्निकट् जाकर पूछा कि हे भगवन् निश्चय करके जिसके जानने पर यह सब जाना जाता है ॥

तस्मै स होवाच ॥ द्वे विद्ये वेदितव्य इति ॥
ह स्म यद्ब्रह्मविदो वदन्ति परा चैवापरा च ॥४॥

निश्चय करके उस शौनक के प्रति वह अंगिरा बोला कि दो ही विद्या जाननी योग्य हैं जो निश्चय करके इसी प्रकार ब्रह्मवेत्ता कथन करते हैं कि 'परा' और 'अपरा' भेद से विद्या दो प्रकार की हैं ॥

तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा

कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति ॥ अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते ॥५॥

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, यह अपरा विद्या हैं और जिस से वह अविनाशी प्राप्त होता है वह 'परा' है ॥

यत्तदद्रेश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णं मचक्षुः श्रोत्रं तदपाणि पादम् । नित्यं विभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मं तदव्ययं यद्भूतयोनिं परिपश्यन्ति धीराः ॥६॥

जो वह ज्ञानेन्द्रियों का विषय नहीं, कर्मेन्द्रियों का विषय नहीं, उस का कोई कारण (गोत्र) नहीं, रक्त पीतादि–वर्णों से रहित, चक्षु श्रोत्रादि से रहित, हस्तपादादि से रहित, सर्व व्यापक और जो अत्यन्त सूक्ष्म है(उस)बृद्धि और क्षय से रहित नित्य विभु । इयत्ता

से रहित) जिस चराचर सृष्टि के कारण को विवेकी पुरुष ज्ञान दृष्टि से सर्वत्र देखते हैं उस का नाम "ब्रह्म" है ॥ १२

यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च यथा पृथिव्यामोषधयः सम्भवन्ति ॥ यथा सतः पुरुषात्केशलोमानि तथाक्षरात्सम्भवतीह विश्वम् ॥७॥

जिस प्रकार मकड़ी अपने शरीर स जाला पूरती है और उसको समेट लेती है जिस प्रकार पृथिवी से अन्नादि औषधियें उत्पन्न होती हैं और जैसे जीते पुरुष से केश और लोम उत्पन्न होते हैं इसी प्रकार उस अविनाशी ब्रह्म से सृष्टि काल मे संसार उत्पन्न होता है ॥

तपसा चीयते ब्रह्म ततोऽन्नमभिजायते । अन्नात्प्राणो मनः सत्यं लोकाः कर्मसु चामृतम् ॥८॥

(निज) प्रयत्न रूप तप से ब्रह्म से जाना जाता है उस ब्रह्म से अन्न का आविर्भाव होता है ॥

अन्न से प्राण उससे मन मन से सत्य पुनः लोक उन लोकों में

अन्न का आविर्भाव होता है ॥

अन्न से प्राण उससे मन मन से सत्य पुनः लोक उन लोकों में कर्म उन कर्मों में उन के फल यथा क्रम उत्पन्न होते हैं ॥ १३

यः सर्वज्ञः सर्व विद्यस्य ज्ञान मयं तपः ॥
तस्मादेतद् ब्रह्म नाम रूप मन्नं च जायते ॥६॥

जो सर्वज्ञ सब का जानने वाला जिसका सब सृष्टिका जानना ही तप है उसी ब्रह्म से यह सूर्य चन्द्रादि सब भुवन नाम रूपवाला सब कार्यान्तर जगत् और अन्न उत्पन्न होता है ॥

इति प्रथम मुण्डके प्रथमः खण्डः ॥

तदेतत्सत्यं मन्त्रेषु कर्माणि कवयो यान्यपश्यं-
स्तानि त्रेतायां बहुधा संततानि ॥ तान्यांचरथ नियतं
सत्यकामा एष वः पन्थाः सुकृतस्य लोके ॥१०॥

वह यह बात सत्य है कि मंत्रों मे जिन अग्नि होत्रादि कर्मों को

वेदवेत्ता देखतेथे वह कर्म त्रेता मे अनेक प्रकार से विस्तृत थे उन कर्मों का हे सत्य कामनाओं वाले लोगों नियम पूर्वक आचरण करो क्योंकि यही तुम्हारा इस मानव देह में पुण्यरूप कर्मोंका मार्ग है। १४

यदा लेलायते ह्यर्चिः समिद्धे हव्यवाहने ॥ तदाज्य-भागावन्तरेणाहुतीः प्रतिपादयेच्छ्रद्धया हुतम् ॥११॥

निश्चय करके जब समिधाओं में अग्नि के प्रदीप्त होने पर अग्नि की ज्वाला लपेंट मारती हैं तब आज्य भाग नामक दो आहुतियें मे क्रम से मध्यमें देवे श्रद्धा से किया हुआ हवन फलदायक होता है॥

यस्याग्निहोत्रमदर्शमपौर्णमासमचातुर्मास्यमनाग्र-यणमतिथिवर्जितंच॥अहुतमवैश्वदेवमविधिना हुतमा-सप्तमांस्तस्य लोकान्हिनस्ति ॥१२॥

जिस का अग्निहोत्र दर्शेष्टि से रहित चतुर्मासेष्टि से रहित श-

रदादि ऋतुओं में जो दृष्टि की जाती हैं उन से वर्जित जो समय पर नहीं किया जाता जो वलि वैश्व देव कर्म से रहित है और जो विधि पूर्वक हवन है वह उस यजमान के सात लोकों तक नाश कर देता है ॥ १९

—※ अथाग्नि जिव्हा वर्णनम् ※—

काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा॥ विस्फुलिङ्गिनी विश्वरुची च देवी लेलायमाना इति सप्तजिह्वाः ॥४॥

काले वर्ण वाली भयङ्कर रूप वाली और मन जैसे शीघ्र वेग वाली और रक्त वर्ण वाली और जो धूम्र के समान वर्ण वाली और कृष्ण आदि सर्व वर्णों (रंग) से युक्त यह दिव्य रूप प्रकाश मान सात जिव्हा हैं ॥

एतेषु यश्चरते भ्राजमानेषु यथाकालं चाहुतयो ह्याददायन् ॥ तन्नयन्त्येताः सूर्यस्य रश्मयो यत्र देवानां पतिरेकोऽधिवासः ॥५॥

१६

निश्चय करके उक्त प्रकाशमान अग्नि की जिव्हाओं मे नियत समय पर जो अग्नि होत्र करता है यह आहुतियें ग्रहण करती हुई सूर्य की किरणें होकर वहां पहुंचाती हैं जहां पर देवताओं का पति इन्द्र एक अधि पति होकर वर्तमान है ॥

एह्येहीति तमाहुतयः सुवर्चसः सूर्यस्य रश्मिभिर्यजमानं वहन्ति ॥ प्रियां वाचमभिवदन्त्योऽर्चयन्त्य एष वः पुण्यः सुकृतो ब्रह्मलोकः ॥६॥

प्रकाश वाली आहुतियें प्रियवाणी बोलती हुई सत्कार पूर्वक आइये२ इस प्रकार कहती हुई सूर्य की किरणों द्वारा उस यजमान

को लेजाती हैं कि यह तुम्हारा पवित्र शुभ कर्म का फलरूप ब्रह्म लोक है ॥

प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म ॥ एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढा जरामृत्युं ते पुनरेवापियन्ति ॥७॥

निश्चय करके ये पूर्वोक्त यज्ञरूप नौकायें जो तरने के साधन कथन किये हैं अदृढ़ हैं जिन में सोलह ऋत्विज, यजमान और उन की पत्नी कथन किये हैं जो अविवेकी पुरुष इन को श्रेष्ठ मान कर प्रसन्न होते हैं वह निश्चय करके जरा और मृत्युको प्राप्त होते हैं ॥

*– अधुना अविद्या ग्रसितानां पुरुषाणां कथनमारभ्यते *–

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितं-मन्यमानाः ॥ जङ्घन्यमानाः परियान्ति मूढा अन्धे-

नैव नीयमाना यथाऽन्धाः ॥८॥

अविद्या मे वर्तमान अपने आपको धीर और पण्डित मानने वाले निरन्तर क्लेश को प्राप्त मूर्ख लोग अन्धे के पीछे चलने वाले अन्धे जैसे दुःख भोगते हैं वैसे ही अविद्यान्धकार में पडेहुए अविवेकी पुरुष चारों ओर से क्लेश को प्राप्त होते हैं ॥

-* अधुना अविद्याया फलं प्रारभ्यते *-

अविद्यायां बहुधा वर्त्तमाना वयं कृतार्था इत्यभिमन्यन्ति बालाः ॥ यत्कर्मिणो न प्रवेदयन्ति रागात्तेनातुराः क्षीणलोकाश्च्यवन्ते ॥९॥

बालक अज्ञानी पुरुष अविद्यामे बहुत प्रकार से वर्तमान हुए हम कृतार्थ हैं यह मानते हैं जिस कारण कर्मी लोग फल में राग के कारण उस के परिणाम अर्थात् (Result) को नहीं जानते

सकाम कर्मणां प्रकारान्तरेण खण्डनमाहः—

इष्टापूर्तं मन्यमाना वरिष्ठं नान्यच्छ्रेयो वेदयन्ते प्रमूढ़ाः॥ नाकस्य पृष्ठे ते सुकृतेऽनुभूत्वेमं लोकं हीनतरं चाविशन्ति ॥ १० ॥ १९

धन तथा सांसारिक मोहरूप अज्ञान से युक्त पुरुष इष्टयागादि और आपूर्त्त वापी कूपतडागादि कर्मोंको श्रेष्ठमानते हुए इसके अतिरिक्त अन्य कोई कल्याणका मार्ग नहीं यह जानते हैं वह स्वर्ग के ऊपर अपने किये हुए कर्मोंको अनुभव करके इस लोक को और इस से भी अधिक नर्क लोक को प्राप्त होते हैं ॥

अथा व्यय पद प्राप्ति माहः—

तपःश्रद्धे येह्युपवसन्त्यरण्ये शान्ता विद्वांसो भैक्षचर्यां चरन्तः॥ सूर्य्यद्वारेण ते विरजाः प्रयान्ति यत्रामृतः स पुरुषो ह्यव्ययात्मा ॥ ११ ॥

जो पुरुष शान्तचित्तवाले विद्वान् भिक्षा से अपनी वृत्ति करते हुए बन में अथवा एकान्त देश में रह कर तप और श्रद्धा का सेवन करते हैं वह निष्पाप होकर (सूर्य द्वारेण) ज्ञानद्वारा वहां जाते हैं जहां निश्चय करके वह मृत्यु से रहित अव्ययात्मा पुरुष है ॥ २०

परविद्याधिकारी पुरुषस्यगुरोः कथनम्ः—

परीक्ष्य लोकान्कर्मचितान्ब्राह्मणो निर्वेदमायान्ना-
स्त्यकृतः कृतेन ॥ तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छे-
त्समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम् ॥ १२ ॥

ब्रह्म विद्याका अधिकारी कर्म से प्राप्त होने वाली अवस्था को परीक्षा करके वैराग्यको प्राप्त होवे क्योंकि कार्यरूप कर्मों से नित्य शुद्ध बुद्ध ब्रह्म नहीं प्राप्त होता उसके विज्ञानार्थ वह जिज्ञासु हाथ में समिधा लेकर वेदवेत्ता ब्रह्मपरायण गुरु को ही प्राप्त हो ॥

शिष्यम्प्रति गुरोः कर्तव्यमाहः—

तस्मै स विद्वानुपसन्नाय सम्यक् प्रशान्तचित्ताय

शमान्विताय ॥ येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यं प्रोवाच तां तत्त्वतो ब्रह्म विद्याम् ॥ २१

शान्त चित्त वशीभूत मनवाला शास्त्रोक्त विधि से आये हुए उक्त शिष्य के लिये वह विद्वान् आचार्य भले प्रकार जिस विद्या से वह अविनाशी और अविकारी पुरुष जाना जाता है उस ब्रह्म विद्या को यथार्थ रीति से उपदेश करे ॥ इति प्रथम मुण्ड के द्वितीयः खण्डः ॥

अथद्वितीयमुण्डकेप्रथमः खण्डः प्रारभ्यतेः—

तदेतत्सत्यं यथा सुदीप्तात्पावकाद्विस्फुलिंगाः सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः ॥ तथाक्षराद्विविधाः सोम्य भावाः प्रजायन्ते तत्र चैवापियन्ति ॥ १ ॥

वह पूर्वोक्त अक्षर ब्रह्म सत्य है जैसे प्रदीप्त हुई अग्नि से उसके समान रूपवाले सहस्रों विस्फुलिङ्ग (चिनगारे) उत्पन्न होते हैं वैसे ही हे सोम्य अक्षर ब्रह्म से बहुत प्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं और उसही में लय हो जाते हैं ॥

दिव्यो ह्यमूर्तः पुरुषः स बाह्याभ्यन्तरो ह्यजः ॥
अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रो ह्यक्षरात्परतः परः ॥ २ ॥ २१

निश्चय से दीप्ति वाला है अमूर्त है, सर्वव्यापक है वह बाहर और प्रत्येक पदार्थ के मध्य में है, जिसलिये निश्चय करके उत्पत्ति से रहित है, इसलिये प्राणों से रहित है, मन से रहित है अतः प्रकाश स्वरूप है, पर अक्षर प्रकृति से भी परे है ॥

एतस्माज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च ॥ खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी ॥ ३ ॥

उस ब्रह्म से प्राण मन सब इन्द्रिय और उनके विषय आकाशवायु अग्नि जल विश्व के धारण करने वाली पृथिवी उत्पन्न हुई ।

अग्निर्मूर्द्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्य्यौ दिशः श्रोत्रे वाग्विवृताश्च वेदाः ॥ वायुः प्राणो हृदयं विश्वमस्य पद्भ्यां पृथिवी ह्येष सर्वभूतान्तरात्मा ॥ ४ ॥

(अस्य) इस ब्रह्म का अग्नि मुख है चन्द्रमा और सूर्य्य चक्षु हैं दिशायें श्रोत्र हैं ऋगादिवेद उस की वाणी हैं और सब ब्रह्माण्ड गत वायु प्राण है सर्व संसार (जगत्) हृदयस्थानीय है, पृथिवी पादस्थानीय है निश्चय कर के यह सब भूतों का अन्तरात्मा है ॥

तस्मादग्निः समिधो यस्य सूर्य्यः सोमात्पर्जन्य ओषधयः पृथिव्याम् ॥ पुमान् रेतः सिंचति योषितायां बह्वीः प्रजाः पुरुषात्संप्रसूताः॥ ५ ॥

उस परब्रह्म से द्युलोक रूप बादल उत्पन्न होते हैं जिसका सूर्य काष्ठादि इन्धन स्थानीय है उस सूर्य रूप अग्नि से मेघ रूप बादल उत्पन्न होते हैं उस से पृथिवी में आन्नादि औषधियें उत्पन्न होती हैं उन से वीर्य और वीर्य्य को पुरुष स्त्री में सींचता है उस से नाना प्रकारकी प्रजा पुरुष से उत्पन्न होती है ॥

तस्माद्दचः साम यजूंषि दीक्षा यज्ञाश्च सर्वे क्रतवो दक्षिणाश्च ॥ संवत्सरश्च यजमानश्च लोकाः

सोमो यत्र पवते यत्र सूर्य्यः ॥ ६ ॥

उस पूर्ण ब्रह्म से ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद उपनयनादि संस्कार और सब अग्नि होत्रादि यज्ञरूप कर्म अश्वमेधादि सब यज्ञ उक्त यज्ञों मे दान और मुहूर्तादि सब काल और यज्ञकर्ता यजमान और सब इन्द्रियों के गोलक जहां पर चन्द्रमा पवित्र प्रकाश करता है,जहां सूर्य प्रकाश करता है वह सर्व लोक उत्पन्न हुए ॥ २४

तस्माच्च देवा बहुधा संप्रसूताः साध्या मनुष्याः पशवो वयाꣳसि॥प्राणापानौ व्रीहियवौ तपश्च श्रद्धा सत्यं ब्रह्मचर्य्यं विधिश्च ॥ ७ ॥

उस अविनाशी परब्रह्म से नाना प्रकार के देवता(दिव्यगुण वाले पुरुष) रजो गुण सम्पन्न सिद्धि की इच्छा वाले देव विषेश साधारण पुरुष और पशु पक्षी प्राण और अपान धान्य और यव और तप गुरु वचन में पूर्ण विश्वास सत्य भाषण इन्द्रियं संयम पूर्वक वेदका स्वाध्याय और विधि यह सब उस परम पिता परमानन्द से उत्पन्न हुए

सप्त प्राणाः प्रभवन्ति तस्मात्सप्तार्चिषः समिधः सप्त होमाः ॥ सप्त इमे लोका येषु चरन्ति प्राण गुहाशया निहिताः सप्त सप्त ॥ ८ ॥

सात प्राण सप्त उनकी वृत्तियें सात विषय सप्त ही उन के होंम और यह सप्त लोक जिन में प्राण आते जाते हैं वह प्राण कैसे हैं जो इस शरीर रूप गुहा में शयन करते हैं यह सब उसी परब्रह्म से उत्पन्न होते हैं ॥

भाष्यः—२ चक्षु २ श्रोत्र २ घ्राण एक वाक् यह सप्त प्राण हैं इनकी सप्त वृत्तियें और इन के, सप्त विषय यह सब आत्मा से उत्पन्न होते हैं ॥

अतः समुद्रा गिरयश्च सर्वेऽस्मात्स्यन्दन्ते सिन्धवः सर्वरूपाः ॥ अतश्च सर्वा ओषधयो रसश्च येनैष भूतैस्तिष्ठते ह्यन्तरात्मा ॥ ९ ॥

उस परमदेव परमात्मा से समुद्र और सकल पर्वत उत्पन्न होते हैं, उसी से सर्व प्रकार की नदियां बहती हैं और उसी से सकल औषधियें और सर्व प्रकार के रस उत्पन्न होते हैं जिस से यह भूतों से स्थिर होता है इसी कारण से यह सब का अन्तरात्मा है ॥

पुरुष एवेदं विश्वं कर्म तपो ब्रह्म परामृतम् ॥ एत द्योवेद निहितं गुहायां सोऽविद्याग्रन्थि विकिरतीहसोम्य॥१०॥

उस-अन्तरात्मा पुरुष में निश्चय करके यह सब जगत् जो शुभा शुभकर्म तितिक्षा "ब्रह्म" वेद परमामृतका समुदाय है स्थिर है हेसोम्य जो पुरुष इस को जानता है वह यहीं आविद्यक ग्रन्थिको विनाशकर देता है ॥

इतिद्वितीयमुण्डकेप्रथमः खण्डः ॥

अथ द्वितीय मुण्डके द्वितीयः खण्डः प्रारभ्यते

अधुना ब्रह्म रूपवर्णनं तत्प्राप्तिश्चाहः—

आविः संनिहितं गुहाचरन्नाम महत्पदमत्रैतत्समर्पितम् ॥ एजत्प्राणन्निमिषच्च यदेतज्जानथ सदसद्वरेण्यं

परंविज्ञानाद्यद्वरिष्ठं प्रजानाम् ॥ १ ॥

वह प्रकाश स्वरूप ब्रह्म सब में व्यापक इस ब्रह्माण्डरूप गुहा में गति करने वाला प्रसिद्ध है वह सब से महान् और सब का स्थिति स्थान है जिस में चलने वाले गति करने वाले प्राणी निमेष क्रिया करने वाले और अनिमेष वाले भी यह सब स्थित हैं,जो स्थूलसूक्ष्म सत् असत्सब पदार्थों में ग्रहण करने योग्य सब से श्रेष्ठ प्रजा के विज्ञान से परे है उस विज्ञानात्मा पुरुष को तुम जानो ॥

यदर्च्चिमद्यदणुभ्योऽणुयस्मिँल्लोका निहिता लोकिनश्च ॥ तदेतदक्षरं ब्रह्म सप्राणस्तदु वाङ्मनः ॥ तदेतत्सत्यं तदमृतं तद्वेद्धव्यं सोम्य विद्धि ॥२॥

जो ब्रह्म दीप्तिवाला है जो सूक्ष्म से सूक्ष्म है जिस में सम्पूर्ण लोक और उन में निवास करने वाले प्राणी स्थित हैं वह यह अक्षर ब्रह्म है वह सबको प्राणन शक्ति देने वाला है और वही वाणी तथा मनका प्रेरक है वह यह सत्य है वह मृत्यु से रहित है वह

जानने योग्य है अतः हे सोम्य तु उसको जान ॥

धनुर्गृहीत्वौपनिषदं महास्त्रं शरं ह्युपासा निशितं संधयीत ॥ आयम्य तद्भावगतेन चेतसा लक्ष्यं तदेवाक्षरं सोम्य विद्धि ॥३॥ २८

उप निषद् सम्बन्धि महास्त्र धनुष को धारणकर निश्चय करके उस में उपासनारूप तीक्ष्ण बाण को लगा और ब्रह्म गत भाव वाले चित्त से प्राणायाम द्वारा खींचकर उसी अक्षर रूप लक्ष्य को हे शिष्य वेधनकर अर्थात् जान ॥

प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते ॥ अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तान्मयो भवेत् ॥४॥

ओङ्कार धनुष है निश्चय करके आत्माबाण है और उसका लक्ष्य ब्रह्म है प्रमाद रहित चित्त से उसका वेधन करे बाण के सदृश जन्मय होजाय ॥

अस्मिन्द्यौःपृथिवी चान्तरिक्षमोतंमनः सह प्राणै

श्च सर्वैः । तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या वाचो विमुञ्चथअमृतस्यैष सेतुः ॥५॥

जिस अक्षर रूप ब्रह्म में द्यलोक पृथिवी लोकऔर अन्तरिक्ष और सब इन्द्रियों के साथ मन ओत प्रोत है निश्चय करके उस एक आत्मा को जानो उस से भिन्न अन्य वाणियों को छोड़ दो क्योंकि यही आत्मा मोक्ष का 'सेतु' पुल है ॥

अरा इव रथनाभौ संहता यत्र नाड्यः ॥ स एषोऽन्तश्चरते बहुधाजायमानः ॥ओमित्येवं ध्यायथ आत्मानं स्वस्ति वः पराय तमसः परस्तात् ॥ ६ ॥

रथ नाभि में अरों के समान जिस में नाडियें ओत प्रोत हैं और जहां वह परमात्मा बहुत प्रकार से आविर्भाव को प्राप्त हुआ भीतर विचरता है उस आत्मा का "ओ३म्" इस परमपद वाचक

पद से ध्यान करो जो अन्धकार से परे है उस की प्राप्ति केलिये तुम को आशीर्वाद हो ॥

१०

यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्यैष महिमा भुवि, दिव्ये ब्रह्मपुरे ह्येष व्योम्न्यात्मा प्रतिष्ठितः ॥ मनोमयः प्राणशरीरनेता प्रतिष्ठितोऽन्ने हृदयं सन्निधाय ॥ तद्विज्ञानेन परिपश्यन्ति धीरा आनन्दरूपममृतं यद्विभाति ॥ ७ ॥

जो सर्वज्ञ सब के जानने वाला है जिस की संसार में यह महिमा है निश्चय करके यह आत्मा हृदय पुण्डरीक रूप दिव्य आकाश में प्रतिष्ठित है ज्ञानस्वरूप है प्राण और शरीर का नेता है इस पार्थिक जगत् में प्रत्येक प्राणी के हृदय को आश्रय करके प्रतिष्ठित है उस के विज्ञान से धीर पुरुष आनन्द रूप अमृत को जो प्रकाशमान् है

ज्ञान दृष्टि से देखते हैं ॥

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ॥ क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे ॥ ८ ॥

उस परावर ब्रह्म के जानने पर हृदय की आविद्यक ग्रन्थि भेदन हो जाती है सर्व संशय नष्ट होजाते हैं और इसके कर्म क्षय को प्राप्त हो जाते हैं ॥

हिरण्मये परे कोशे विरजं ब्रह्म निष्कलम् ॥ तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्यदात्मविदो विदुः ॥ ९ ॥

उस ज्योतिमय हृदय कोष में तमो गुण से रहित निरवयव ब्रह्म विराजमान है वह शुद्ध है, सूर्य चन्द्रादि ज्योतियों का भी ज्योति अर्थात् प्रकाशक है वह जो है उस को आत्मवेत्ता जानते हैं अन्य कोई नहीं ॥

न तत्र सूर्य्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः ॥ तमेव भान्तमनु भाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥ १० ॥ ३२

उस ब्रह्म में सूर्य्य प्रकाश नहीं करता चन्द्रमा और तारागण भी प्रकाश नहीं करते न यह विजलिंय उसको प्रकाश करती हैं यह भौतिकाग्नि कहां प्रकाश कर सक्ता है, उस ही स्वयं प्रकाश के पीछे सब प्रकाशित होते हैं उसी के प्रकाश से यह सब तेजो मण्डल प्रकाशित होता है, स्वयं नहीं ।

अथ ब्रह्म सर्व व्यापकता कथनम्:-

ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्ताद्ब्रह्म पश्चाद्ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण ॥ अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्॥११॥

पूर्वोक्त यह अमृत रूप ब्रह्म ही है पूर्व ब्रह्म था अन्त में ब्रह्मही शेष रहेगा दक्षिण की ओर और उत्तर की ओर नीचे और ऊपर भी यह ब्रह्म ही विस्तृत अर्थात् फैला हुआ है यह विश्व अति श्रेष्ठ ब्रह्म ही है ॥ ११

इति द्वितीय मुण्डके द्वितीयः खण्डः ॥

अथ तृतीय मुण्डके प्रथमः खण्डः प्रारभ्यतेः-

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ॥ तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्न्यो ऽभिचाकशीति ॥ १ ॥

(द्वा) दो (सुपर्णा) पक्षी (सयुजा) साथ मिलेहुए (सखाया) मित्र से हैं और (समानं) अपने समान (वृक्षं)वृक्ष को (परिषस्व जाते) सब ओरसे आश्रय किये हुए हैं (तयोः) उन दोनों में से (अन्यः) एक तो (पिप्पलं) फलको (स्वादुः) स्वादु मानकर (अत्ति) खाता

है और (अन्यः) दूसरा (अनश्नन्) न खाता हुआ (अभिचाकशीति) साक्षी मात्र है ॥

३४

समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नोऽनीशया शोचति मुह्यमानः ॥ जुष्टं यदा पश्यत्यन्यमीशमस्य महिमानमिति वीतशोकः ॥ २ ॥

प्रकृति माया रूप वृक्ष में, पुरुष अज्ञान से निमग्न है, प्रकृति की अवर्णात्मक शक्ति से मोह को प्राप्त हुआ हुआ शोक करता है जब योगी सद्गुरुओं से युक्त ईश्वर को अपने से भिन्न देखता है और इसकी महिमा को देखता है तब शोक से मुक्त होजाता है ॥

यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णं कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम् ॥ तदा विद्वान्पुण्यपापे विधूय निरंजनः परमं साम्यमुपैति ॥ ३ ॥

जब उपासक स्वयं प्रकाशक विश्व के कर्ता सर्व शक्तिसम्पन्न सर्वोपरि ब्रह्मको देखता है तब वह ब्रह्मवेत्ता पुरुष पुण्य और पाप को दूर करके 'निरञ्जन' परब्रह्म को प्राप्त होता है ॥

प्राणो ह्येष यः सर्वभूतैर्विभाति विजानन् विद्वान्भवते नातिवादी ॥ आत्मक्रीड आत्मरतिः क्रियावानेष ब्रह्मविदां वरिष्ठः ॥ ४ ॥

निश्चय करके यह प्राण रूप है जो सब भूतोंसे सुशोभित अर्थात् प्रकट है उसको जानता हुआ विद्वान् पुरुष मिथ्या बोलने वाला नहीं होता ऐसा पुरुष आत्मा में क्रीड़ाकरने वाला आत्मा में प्रीति वाला आत्म विषयक अनुष्ठान वाला होता है और ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ कहा जाता है ॥

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन

ब्रह्मचर्येण नित्यम् ॥ अन्तःशरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः ॥ ५ ॥

इस शरीर के मध्य में प्रकाश स्वरूप शुद्ध यह आत्मा निश्चय करके सत्य से यथार्थ ज्ञान से ब्रह्मचर्य्य रूप तप से सर्वदा प्राप्त होता है उसको निश्चय करके जिन के अविद्यादि दोष क्षीण होगये हैं ऐसे साधन सम्पन्न यति पुरुष उसको देखते हैं ॥

सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः ॥ येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम् ॥ ६ ॥

सत्य ही की विजय होती है असत्य की नहीं सत्य ही से ज्ञानरूपी मार्ग विस्तृत होता है जिस मार्ग से आप्तकामनाओं वाले ऋषिलोग निश्चय करके आक्रमण करते हैं जहां पर वह सत्य का उत्कृष्ट स्थान है ॥

बृहच्च तद्दिव्यमचिन्त्यरूपं सूक्ष्माच्च तत्सूक्ष्मतरं विभाति ॥ दूरात्सुदूरे तदिहान्तिके च पश्यत्स्विहैव निहितं गुहायाम् ॥ ७ ॥

वह ब्रह्म बड़ा है और प्रकाश स्वरूप है उस का स्वरूप चिन्तन नहीं किया जासक्ता वह सूक्ष्म से भी अति सूक्ष्म है दीप्तिमान् है वह दूर से भी दूर और अन्तः करण में समीप है ज्ञान दृष्टि से देखने वालों के लिये यहां ही अन्तःकरण रूपी गुहा मे विराजमान है ॥

न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा नान्यैर्देवैस्तपसा-कर्मणा वा ॥ ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्त्वस्ततस्तु तं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः ॥ ८ ॥

वह ब्रह्म चक्षुओं से ग्रहण नहीं किया जासक्ता, न वाणी से ग्रहण किया जासक्ता है न और इन्द्रियों से न तितिक्षा से और न कर्मों से किन्तु ज्ञान के महत्व से अन्तः करण की शुद्धि द्वारा वह

ध्यान करने वाला पुरुष उस निरवयव ब्रह्म को देखता है ॥

एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यो यस्मिन्प्राणः पञ्चधा संविवेश ॥ प्राणैश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां यस्मिन्विशुद्धे विभवत्येष आत्मा ॥ ९ ॥

ध्यान करने वाला आत्मा अणु है इस बात को जिज्ञासु अपने अनुभव से स्वयं जानता है जिस आत्मा में पांच प्रकार का प्राण स्थिर है जिस विशुद्ध ब्रह्म में यह विराजमान होता है उसी में सम्पूर्ण प्रजाओं का इन्द्रियों के साथ चित्त ओत प्रोत है ॥

यं यं लोकं मनसा संविभाति विशुद्धसत्वः कामयते यांश्च कामान् ॥ तं तं लोकं जयते तांश्च कामांस्तस्मादात्मज्ञं ह्यर्चयेद्भूतिकामः ॥ १० ॥

निर्मलअन्तः करण वाला मुक्त पुरुष जिस जिस अवस्थाका आत्म-

भूत सामर्थ्य से चिन्तन करता है और जिन जिन कामों की कामना करता है उन उन अवस्थाओं को और उन उन कामनाओं को प्राप्त होता है इसलिये निश्चय करके मुक्ति रूप विभूति चाहने वाला आत्मा को जानने वाले मुक्त पुरुष की गुरुभाव से पूजाकरे ॥ ३९

इति तृतीय मुण्डके प्रथमः खण्डः ॥

अथ तृतीय मुण्डके द्वितीयः खण्डः प्रारभ्यतेः—

स वेदैतत्परमं ब्रह्म धाम यत्र विश्वं निहितं भाति शुभ्रम् ॥ उपासते पुरुषं ये ह्यकामास्ते शुक्रमेतदति-वर्तन्ति धीराः ॥ १ ॥

वह 'मुमुक्षु' इस सर्वोपरि सब के आश्रय भूत (ब्रह्मको) जानता है जिस ब्रह्म मे सकल ब्रह्माण्ड स्थिर हैं और जो शुद्ध प्रकाश स्वरूप है।निश्चय करके जो निष्कामी उस पूर्ण पुरुष की उपासना

करते हैं वे धीर पुरुष इस जन्म मरण को उल्लङ्घन कर जाते हैं ॥
शुक्रंवीर्यं सन्तानोत्पत्तिकारणं,वीर्यमुल्लङ्घयन्ति,ऊर्ध्वं रेतसं सम्भवन्ति ४०

कामान्यः कामयते मन्यमानः स कामभिर्जायते तत्र तत्र ॥ पर्याप्तकामस्य कृतात्मनस्तु इहैव सर्वे प्रविलीयन्ति कामाः ॥ २ ॥

जो पुरुष सकाम कर्मों को श्रेष्ठ मानता हुआ कामना करता है वह उन कामनाओं के अनुसार जहां जहां उत्पन्न होता है, और जिस की सब कामनायें पूर्ण होगई हैं जिसने अपने मन को वशीभूत कर लिया है, ऐसे पुरुष की सब कामनायें इस जन्म में ही नाश को प्राप्त होजाती हैं ॥

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन ॥ यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा

विवृणुते तनुं स्वाम् ॥ ३ ॥

यह आत्मा केवल वेदाध्ययन से नहीं मिलता न बुद्धि से न बहुत शास्त्रों के श्रवण करने से प्राप्तहोता है किन्तु जिस मुमुक्षु पुरुष को ही यह आत्मा योग्य समझता है उसी को मिलता है और उसीको यह आत्मा अपने आनन्द स्वरूप को दर्शाता है ॥

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यो न च प्रमादात्तपसो वाप्यलिङ्गात् ॥ एतैरुपायैर्यतते यस्तु विद्वांस्तस्यैष आत्मा विशते ब्रह्मधाम ॥ ४ ॥

यह आत्मा आत्मिक बल रहित पुरुष को नहीं प्राप्त होता और विषया शक्ति रूप प्रमाद से अथवा त्याग रहित तपसे भी नहीं प्राप्त होता आत्मिक बल प्रमाद रहित चित्त तथा त्याग सहित तप, इत्यादि उपायों से जो विद्वान् पुरुष यत्न करता है उस को यह आत्मा ब्रह्म

धाम ब्रह्म स्वरूप में प्रवेश करता है।। अधुनाऽऽत्मतत्व फल प्राप्ति माह:

संप्राप्यैनमृषयो ज्ञानतृप्ताः कृतात्मानो वीतरागाः ३२
प्रशान्ताः ॥ ते सर्वगं सर्वतः प्राप्य धीरा युक्तात्मा-
नः सर्वमेवाविशन्ति ॥ ५ ॥

इस को ऋषि लोग प्राप्त होकर ज्ञान तृप्त हुए वशी कृत मनवाले रागादि दोषों से विरक्त शान्त चित्त वाले होजाते हैं वे धीर समाहित चित्त होकर सर्वगत ब्रह्म को सब ओर से प्राप्त हुए सब ही में निवास करते हैं ॥

वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः संन्यासयोगाद्यतयः
शुद्धसत्त्वाः ॥ ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले परामृताः
परिमुच्यन्ति सर्वे ॥ ६ ॥

वेदान्त विज्ञान द्वारा संशय से रहित यती लोग जिनका कर्म-

योग और ज्ञान से अन्तः करण शुद्ध होगया है वह सब पर्यन्त काल तक ब्रह्मलोक में जीवन्मोक्ष हुए हुए पुनः संसार में नहीं आते हैं ॥ ४३

गताः कलाः पञ्चदश प्रतिष्ठा देवाश्च सर्वे प्रतिदेवतासु ॥ कर्माणि विज्ञानमयश्च आत्मा परेऽव्यये सर्व एकीभवन्ति ॥ ७ ॥

प्राणादि पञ्चदश कलायें मुक्ति अवस्था में अपने कारण में लय होजाती हैं और चक्षुरादि सब इन्द्रियें अपने अपने कारण में लय होजाते हैं कर्मेन्द्रिय और विज्ञानमय आत्मा यह सब पर ब्रह्म में एक होजाते हैं ॥

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नाम रूपे विहाय ॥ तथा विद्वान्नामरूपाद्विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥ ८ ॥

जिस प्रकार नदियें बहती हुई समुद्र में नाम और रूपको छोड़ कर लयता को प्राप्त होजाती हैं इसी प्रकार विद्वान् पुरुष नाम ४४
और रूप से विमुक्त हुआ परे से परे जो ब्रह्म है उस दिव्यस्वरूप पुरुष को प्राप्त होता है ॥ अद्भुत ब्रह्म भावं कथ्यते:—

स यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति नास्याब्रह्मवित्कुले भवति ॥ तरति शोकं तरति पाप्मानं गुहाग्रन्थिभ्यो विमुक्तोऽमृतो भवति ॥ ९ ॥

निश्चय करके जो उस सर्वोपरि ब्रह्म को जानता है वह ब्रह्म ही होजाता है इस के कुल मे ब्रह्म का न जानने वाला नहीं होता और वह शोक को तर जाता है, और अन्तः करण की आविद्यक ग्रन्थियों से मुक्त होकर अमृत होजाता है ॥

तदेतदृचाभ्युक्तं क्रियावन्तः श्रोत्रिया ब्रह्मनिष्ठाः ।

स्वयं जुह्वत एकर्षि श्रद्धयन्तः, तेषामेवैतां ब्रह्मविद्यां वदेत शिरोव्रतं विधिवद्यैस्तु चीर्णम् ॥ १० ॥

जो वह पूर्वोक्त ऋचाने कथन किया है कि निष्कामी पुरुष वेद वेत्ता ब्रह्म का उपासक श्रद्धा वाला आप एक ब्रह्म की उपासना करने वाला और जिस ने शिरो व्रत को विधि पूर्वक धारण किया है उस कोही उक्त 'ब्रह्मविद्या' का उपदेश करे ॥

तदेतत्सत्यमृषिरङ्गिराः पुरोवाच नैतदचीर्णव्रतोऽधीते नमः परम ऋषिभ्यो नमः परमऋषिभ्यः ॥११॥

यह बात सत्य है कि मथम अङ्गिरा ऋषिने कहा कि इस ब्रह्म ज्ञान को खण्डित व्रतवाला नहीं पासक्ता ब्रह्म विद्या के प्रवर्तक ऋषियों को हमारा नमस्कार हो नमस्कार हो ॥

इति तृतीय मुण्डके द्वितीयः खण्डः

by strong winds.
The day temperatures

1. The school invites sealed tenders by 26 Apr 2015 as u
(a) Installation of smart class projects for 12 rooms

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः ॥ भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ॥ स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिः ॥ व्यशेम देवहितं यदायुः ॥ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ॥ स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः ॥ स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥ ४१

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

इति मुण्डकोपनिषत् समाप्ता

॥ ओ३म् ॥

हविके लिये हे अग्ने, कीये हुए स्तुति तुम ।
हवि देवों को ये दीजे, आसन ग्रहण ये कीजे ॥१॥

कल्याणार्थ सब के करने केलिये 'वैदिक' प्रार्थनाः-

जगदीश ब्रह्म प्रभुजी, सुनिये विनय हमारी ॥ टेक ॥
हों विप्र पैदा जग में, निज कर्म धर्म धारी ॥
रण धीर क्षत्री होवें, अधिकारी वेद धारी ॥ १ ॥

दें गउवें दूध सुन्दर, हों बैल बल के धारी ॥
गति तेज़ होवें घोड़े, स्त्री गुण वो रूप वारी ॥२॥

जब जग करे ये इच्छा, बरसावें मेघ जलभर ॥
फल सुख के दाई सब ही, सब योग क्षेम पावें ॥३॥

रघुनाथ की ये विनती, हृदये सभी लगावें ॥
ये वेद की है आज्ञा, निज शीस पर चढ़ावें ॥ ४ ॥

—o—

श्री पञ्चनदीय विश्वविद्यालयाधीत विद्येनेन्द्र
प्रस्थमण्डलान्तर नरायलयाख्य ग्रामवासि
रघुनाथ स्वामिनिर्मितोप
निषत्समाप्ता ॥

urg
take
to p
itag
De
Rak
fire
and
tive
the
rescu
He

e to the SC for
setting aside his

4 lakh

sened on Novem
was referred to
pital. He was tak
eral Hospital,
was referred to
tak, where he
ember 5.
The counsel
ceased's father M
ght a compens
4 lakh for not adr
Tetnus in t
stance which led
eath. He said the BA
or is not authorise
llopathic medicin

of

the region wit-
nessed widespread inter-
mittent rain accompanied
by strong winds.
The day temperatures

LIC SCHO

Ferozepur 152001. Tel No - 01632-2
Mob No 98725274 Website: www.apsferozepu

TENDER NOTICE

1. The school invites sealed tenders by 26 Apr 2015 as u
(a) Installation of smart class projects for 12 rooms

॥ ओ३म ॥

श्री स्वामी पुस्तकालय

नरेला,—देहली प्रान्त.

निम्न लिखित पुस्तकें इस पुस्तकालय से डाकव्यय भेजने पर प्राप्त होसकती हैं ॥

प्रातः स्मरणम्, ओङ्कार व्याख्या,
गायत्र्यर्थ प्रकाशिका, भक्तिमार्ग, गणेश पूजन,
सत्य शब्द संग्रह, बाल शिक्षा, इत्यादि

मेनेजरः—

पण्डित सूर्य्यभानु शर्म्मा,-नरेला.